REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 12 | ISSUE - 7 | APRIL - 2023

भक्ति आंदोलन और भक्ति काव्य में नारी विषयक दृष्टिकोण

Dr. D. M. Rathod
Associate Professor, Hindi Department,
Smt. B. V. Dhanak Arts, Commerce, Science and Management College ,
Bagasara (Dist. Amreli).

विषय का महत्त्व और संभावना

भारतीय के इतिहास में ऐसी घटनाएँ घटित हुयी हैं जिसने सबको प्रभावित किया है, भक्ति आंदोलन भारतीय इतिहास की ऐसी ही परिघटना है जिसने पूर्व से लेकर पश्चिम तक, उत्तर से लेकर दक्षिण तक, कोटि–कोटि जन साधारण को आंदोलित किया है। भक्ति आंदोलन पूरे देश में एक साथ नहीं फैला, यह किसी प्रांत में पहले आया तो किसी प्रांत में बाद में। भारतीय इतिहास में ऐसा प्रथम बार हुआ है कि, समाज के उपेक्षित वंचित पीडित् तबकों ने अपने कवि पैदा किए, उन्हानें तत्कालीन समाज के व्यथा–कथा को स्वर दिया। कबीर, सूर, तुलसी, जायसी और मीरा की अद्‌भुत उपस्थिति इस युग में देखने को मिलती है जिसके कारण भक्तियुग को हिन्दी साहित्य का स्वर्ण – युग कहा गया है। भक्ति आंदोलन का केंद्र बिंदु मानव मात्र की केन्द्रिकता है। वह वर्ग, वर्ण जाति, संप्रदाय प्रादेशिक अस्मिता जैसे बने बनाए सामंती समाज के सांचों को नकार कर, मानवतावाद मात्र को सर्वोच्च स्थान में रखता है। इसके अतिरिक्त भक्तिकाल में प्रेम मूल्य केंद्रीय विषय रहा है। भक्तियुग का प्रत्येक कवि प्रेम का कवि है। भक्त कवि मानव में ही नहीं पूरे संसार में प्रेम मूल्य का प्रसार देखता है।

भक्ति आंदोलन में ऐसा प्रथम बार हुआ कि आम जनता की भाषा, कविता की भाषा बन गयी। संस्कृत के प्रकांड विद्वान तुलसीदास ने अवधी लाके भाषा में 'रामचरितमानस' लिखा। संत कबीर 'संस्किरत है कूप जल, भाखा बहता नीर' अथार्त् संस्कृत कूप जल को छोडकर बहता नीर (भाखा) लाके भाषा में काव्य सृजन किया है। भक्ति आंदोलन में ना सिर्फ समाज के हाशिए के लोगों की पीड़ा को अभिव्यक्ति मिली बल्कि बड़े पैमाने पर भक्त कवयित्रियाँ की भी उपस्थिति इस युग में सहज देखी जा सकती है। मीरा, ललदवे अक्मा महादेवी, ताज, सहजोबाई और सीता आदि भक्त कवयित्रियाँ हैं जिन्हों न भक्ति के आवरण में नारी जाति की पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान की है। भक्तिकाल के प्रत्येक कवि की स्त्री–विषय दृष्टि का अपना एक मौलिक स्वरूप है। जो दृष्टि एक भक्त कवि के पास है वही दूसरे कवि के पास नहीं है ।

संत कबीर भक्ति साधना में नारी को भयावह और तिरस्करणीय छवि प्रदान करते हैं और नारी की छाया मात्र से भुजंग के अंधे हो जाने की उपमा देते हैं जो आज भी लोक जीवन में प्रचलित है। संत कबीर ने नारी के माया रूप की घोर निंदा की है 'माहा महाठगिनी हम जानी, तिरगुन, फाँस लिए कर डौले मधुरी बानी।' यहाँ प्रश्न यह है कि यदि नारी का माया रूप साधना में इतना अधिक बाधक है तो परमात्मा के प्रति भक्ति की चरम अवस्था में नारी का रूप धारण कर लेते हैं। संत कबीर को नारी के रूप, प्रेमाकुल समर्पण और परमात्मा से दूर होने की अपनी मजूबरी को नारी की विरह–वेदना का मुहावरा देने की क्यों आवश्यकता पडी़ ? राम को 'बालम' का रूप क्यों दिया? संत कबीर प्रेम और विरह की तीव्रता में पुरुष कबीर नारी का रूप क्यों धारण करते हैं ?

''कागा सब तन खाइयो चुन –चुन खाइयो मांस ।
दौ नैनामत खाइयो पिया मिलन की आस।''
'हरि मोरा पिउ मै। हरि की बहुरिया'
'हरि जननी मैं बालक तेरा'
'बालम आओ हमारे गेहरे तुम बिन दुखिया देहरे।'
'दुलहिनी गावहु मंगलचार, हम घरि आए राजा राम भरतार।'

संत कबीर की भक्ति, प्रेम और विरह कविता में नारी ही प्रेम की विधायिका, कर्त्ता और दृष्टा माना है। उनके सकारात्मक नारी स्वरूप की कविताओं में कवि स्वयं ही नारी बन गया है राम की दुल्हिनिया। संत कबीर को अपना भविष्य नारी के रूप में दिखाई देता है। इस प्रकार संत कबीर एक पक्ष में नारी निंदा का संस्कार है जबकि दूसरे पक्ष में स्वयं नारी का रूप धारण करना यह अंतर्विरोध है ।

कवि जायसी सामंती समाज में नारी की स्थिति को पहचानते हैं । उनमें संतों के माया रूपी निंदा नहीं पायी जाती है। सूफी कवियों ने नारी के लोकजीवन की छवियों को प्रस्तुत किया है। 'जायसी' की पद्मावत में 'नागमती का विरह वर्णन हिन्दी साहित्य में अद्वितीय वस्तु है। जायसी के नारी विरह के रूप में एक साधारण नारी के रूप में वणिर्त किया गया है। उन्हानें हिंदू गशहिणी की विरह वाणी को व्यक्त किया है जो सात्विक और मर्यादापूर्ण माधुर्य का परम मनोहर है।

''पिउ सों कहउे संदेसड़ा, हे भोरा हे काग।
सोधनि विरहे नरि मुई, तेहिक धुआँ हमहिं लागा।''
''यह तन जारो हार कै कहो कि पवन उड़ाए।
मकु तेहि मारग होई परै कंत धरै जड़ पाउ।''

मध्यकालीन समय में नारी को पुरुष के अधीन होकर ही जीवन बिताना पड़ता था। लोकजीवन में नारी को कठारे अनुशासन में रहना पड़ता था, 'पद्मावत' जैसी राजकुमारी को भी जीवन की दहलीज पर पांव रखते ही अंतःकक्ष में निवास के लिए भेज दिया। इस प्रकार सूफी कवियों के आदर्श नारी का चित्रण किया गया है। जायसी की नागमती और पद्मावती जीवन पर्यन्त पतिव्रता धर्म का पालन करती है। पति तक पहुँचने के लिए स्त्री अपना अस्तित्व को मिटाकर मार्ग की धूलि तक होने को तैयार है। जिससे वह उडकर पति के पास पहुँच जाए। सूफी कवियों में नारी को माया है ''नागमति यह दुनिया धंधा। अर्थात् नारी को माया का रूप दिया है। दूसरी पक्ष में नारी को परमात्मा के रूप में देखा है।

'फूलै मरै पै मरै न बासू कोई न रहा जग रही कहानी।'
'छार उठाई लीन्ह एक मुंठी। दीन्हि उड़ाई पिरथमी झूठी।'

कवि जायसी कहता है आज न तो राजा रत्नसने जीवित है न हीरामन तोता शेष बचा है न सुल्तान अलाउद्दीन बच सका है। अर्थात् जीवन में यश न तो खरीदने से मिल सकता है और न बेचने से किसी को दिया जा सकता है। जीवन में प्रेम ही सत्य है। जायसी परमात्मा को नारी का रूप प्रदान करते हैं। उसी में प्रेम स्वरूप जीवन देखते हैं।

'कृष्णकाव्य धारा' में सूरदास, गोपियों के माध्यम से सामंती समाज को चुनौती पेश करते हैं । सूर की गोपियाँ न तो पुरुष का रूप ग्रहण करती है। न ही कृष्ण नारी का रूप ग्रहण करता है। सूरदास की गोपियाँ, सामंती समाज की रूढ़ियों को खुली चुनौती देती है। गोपियाँ समाज के स्त्री–पुरुष प्रेम स्वरूप की तमाम जंजीरों को तोड़ती है।

''उर में माखन चोर गड़े, अब कैसेहुँ निकसति नाहीं, तिरछे है जु अड़े।''
'लरिकाई को प्रेम कहो अलि कैसे छूटे'

सूरदास, संत कबीर की तरह भक्ति की चरम अवस्था में नारी का रूप ग्रहण नहीं करते हैं बल्कि गोपियों के माध्यम से ही भक्ति, प्रेम करते हैं नारी रूप में ही नारी की पीड़ा को व्यक्त करते हैं । गोपियाँ विवाहित हाने के बावजूद कृष्ण से प्रेम करती हैं, कृष्ण के साथ रासलीला करती हैं । दूसरी तरफ कृष्णकाव्य धारा में मीरा भक्त कवयित्री मौजूद है इनके पदों में नारी मुक्ति के स्वर सुनाई देते हैं मीरा कृष्ण के प्रेम में मस्त हैं, मीरा सामंती समाज के नियंत्रणों पर बेबस नहीं है, मीरा ने अपने पदों में शास्त्र और लोक दोनों को चुनौती दी है।

''पग घुंघरु बांध मीरा नाची रे।
मैं तो अपने नारायण की आपहि हो गई दासी रे।
लोग कहैं मीरा बावरी, न्यात कहैं कलु नासी रे।''

मीरां सामंती समाज को कूड़ा कहती है और सामंती समाज की चाकर नहीं रहना चाहती है। मीरा नारी के तमाम प्रतीकों को चुनौती देती है उन्हें नकारती है। सामंती समाज के तमाम रूपों से प्रतिशोध लेती है सबसे घोर नारी रूढ़ि सती प्रथा को नकारती है और सती नहीं होती है। वो भी आज से

पाचँ सो वर्ष पहले। उस समय सती प्रथा पर प्रश्न चिहन् लगाना ही साहस का कदम है।

तुलसीदास की नारी के प्रति दृष्टि विवाद का प्रमुख विषय रहा है। उन्होंने नारी के माया रूप में निंदा की है और नारी को भक्ति साधना में बाधा माना है। उनके समय में नारी का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। तुलसी के समय में सामंती समाज में नारी स्वतंत्रता को सामाजिक दृष्टि से हितकारी नहीं माना गया है। उसी की छाप तुलसीदास पर दिखाई देती है वे कहते हैं कि 'जिमि स्वतत्रं होइ विगरहिं नारी'। तुलसीदास सामंती समाज की लोक मर्यादा तोडने की अनुमति नहीं प्रदान करते हैं । उनके समय में सामाजिक मर्यादा का अतिक्रमक करना ही स्त्री को बिगड़ना माना जाता था। उसी प्रकार तुलसी नारी को मर्यादा के अनुकूल ही स्वतंत्रता को उचित मानते हैं । उन्हानें समाज के लोक मंगल के लिए सामंती समाज की मर्यादा का अतिक्रमण उन्हें पसदं नहीं है। यदि तुलसीदास का दूसरा पक्ष देखा जाए। तुलसी के समय में नारी की सामाजिक स्थिति बहुत दुखद स्थिति थी। सामंती समाज में नारी को विवशता और आत्मदमन, दासता का जीवन व्यतीत करना पड़ रहा था उनके समय में नारी की तुलना ढोल गंवार शूद्र और पशुओं से की जा रही थी। तुलसी नारी पराधीनता के प्रति संवेदनशील भी हैं । मध्यकालीन जड़ता की सामाजिक जंजीरों में बंधी नारी को सपने में भी सुख नहीं मिलता है। तुलसी नारी के अंतर्मन पीड़ा के प्रति उनमें तीव्र आक्रोश भी है।

तुलसीदास सामंती समाज के परम्परागत मूल्यों को तोड़ते हुए राम और सीता का प्रेम विवाह का आदर्श रूप प्रस्तुत किया है। उन्होंने पुष्पवाटिका में राम और सीता का विवाह–पूर्व मिलन करवाना, राम–सीता के रूप सौन्दर्य पर मुग्ध हो जाते हैं । इसके माध्यम से उन्होंने नारी को सामंती समाज में सम्मानजनक स्थान प्रदान करते हैं । इसके साथ ही तुलसी सामंती समाज के एक पत्नीव्रत मूल्य आदर्श की रक्षा करते हैं अपने 'मानस' में नारी को भक्ति सुलभ का उपदेश प्रदान करते हैं –

'एकनारिव्रत रत सब सारी। ते मन बच क्रम पति हिकारी।'
'राम भगति रत नर अरू नारी। सकल परम गति के अधिकारी।'

आधुनिक समय में अस्मिता मूलक विमर्श के उभार में जो नयी बहसें शुरु हुयी हैं उनमें नारी, दलित और आदिवासी जैसे प्रश्न मुख्य है ? वैसे तो आधुनिक संदर्भों में स्त्री चिंतन पश्चिम से आयातित है जिनमें कई बिंदुओं को लेकर बहस है – स्त्री–विमर्श, स्त्री और पुरुष के समान अधिकारों का पक्षधर है। नारीवादी आंदोलन के मूलमें स्त्री और पुरुष में असमानताएँ नैसर्गिक नहीं है, इनको बदला जा सकता है। स्त्री और पुरुष में असमानता का मुख्य कारण पितृसत्ता है। पितृसत्ता से आशय है कि ऐसी सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्था से है जिसमें स्त्री की अपेक्षा पुरुष को अधिक महत्व और शक्ति प्रदान की जाती है, पितृसत्ता मानती है कि पुरुष और स्त्री प्रकृति से और भिन्न है। इसी भिन्नता के कारण समाज में स्त्री की असमान स्थिति को न्यायोचित ठहराती है। नारीवादी आंदोलन कर्त्ताओं का मानना है कि स्त्री और पुरुष के जैविक विभेद या लिंग

भेद प्राकृतिक और जन्मजात होता है जबकि लैगिंकता का भेद पितृसत्ता द्वारा बनाया जाता है। स्त्री–विमर्श मानना है कि मनुष्य का जन्म नर या मादा के रूप में होता है लेकिन पितृसत्ता ही औरत या मर्द की सामाजिक भूमिकाएँ समाज में गढ़ता है। जीव विज्ञान का तथ्य है कि केवल औरत ही गर्भ धारण करके बालक को जन्म दे सकती है। लेकिन जीव विज्ञान में यह तथ्य नहीं है कि जन्म देने के बाद केवल स्त्री ही बालक का लालन–पालन करे। यह तो सामंती समाज द्वारा निर्धारित किया जाता है। नारीवादियों का मानना है कि स्त्री–पुरुष असमानता का अधिकांश भेद प्रकृति ने नहीं बल्कि पितृसत्ता व्यवस्था ने पैदा किए है। पितृसत्ता द्वारा ही स्त्री और पुरुष के श्रम का विभाजन किया है स्त्री को निजी और घरेलू कार्यों की जिम्मेदारी दी जाती है। जबकि पुरुष को सार्वजनिक और बाहरी दुनिया की जिम्मेदारी निर्धारित की जाती है। समकालीन समय में स्त्रियों द्वारा सार्वजनिक कार्य में तीव्र भागीदारी ले रही है लेकिन अभी भी घरेलू काम की पूरी जिम्मेदारी स्त्रियों पर ही है। स्त्री दोहरे बोझ के कारण भी निजी या सार्वजनिक निर्णय न के बराबर है। नारीवादियों का मानना है कि समाज में स्त्री के प्रति सभी भेद भाव समाज द्वारा गढ़े गए हैं, स्त्री विमर्श का मलू आधार समाज में विद्यमान सभी लैंगिक असमानता के सभी रूपों को मिटाया जा सकता है और मिटाया जाना चाहिए।

उद्देश्य

प्रस्ततु पेपर में भक्त कवियों के नारी के प्रति नकारात्मक और सकारात्मक दृष्टिकोण का विवेचन किया जाएगा। भक्त कवियों का नारी के प्रति माया रूप अथार्त् नकारात्मक छवि का ही अधिक अध्ययन हुआ है। जबकि भक्त कवियों में नारी के दोनों पक्ष विद्यमान हैं । इसके साथ ही भक्त कवियों की स्त्री–दृष्टि और समकालीन स्त्री–विमर्श से तुलनात्मक शोध किया जाएगा। समकालीन समय में लैगिंकता का विषय बहुत ही महत्वपूर्ण हो गया है। जबकि नारी के प्रति ऐतिहासिक व समकालीन दौर में दोहरा शोषण हो रहा है। सामंती मानसिकता के दृष्टिकोण का अध्ययन किया जाएगा।

उपादेयता

नारी को आदिकाल से आधुनिक समय तक समाज के हाशिए पर ही रखा गया है। स्त्री को समाज की मुख्य धारा में स्थान नहीं दिया गया है। विश्व की आधी आबादी को अभी भी समानता का अधिकार सपना बना हुआ है। समकालीन दौर में भी स्त्री के श्रम का कम महत्व, अथार्त् सत्ता के सर्वोच्च निर्णयों में न के बराबर भागीदारी है। स्त्री की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में बहतु कम सक्रिय भागीदारी है।

संदर्भ ग्रंथ–सूची

- चतुर्वेदी परशुराम – उत्तरी भारत की संत परम्परा, भारती भंडार लीडर प्रेस, इलाहाबाद संस्करण 2008 विक्रमी
- द्विवेदी हजारीप्रसाद – हिन्दी साहित्य : उद्‌भव और विकास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
- द्विवेदी हजारीप्रसाद – हिन्दी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
- बड़थ्वाल पीताम्बर दत्त – हिन्दी काव्य की निर्गुण धारा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1995 ई.
- मिश्र शिवकुमार – भक्ति आंदोलन और भक्ति काव्य, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2005
- शुक्ल रामचंद्र – हिन्दी साहित्य का इतिहास, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, नवीन संस्करण 2014
- शर्मा, रामकुमार – हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, रामनारायण बेनी माधव प्रकाशन, इलाहाबाद
- सिंह, गोपेश्वर (सं) – भक्ति आंदोलन के सामाजिक आधार, भारतीय प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली
- सिंह, गोपेश्वर – भक्ति आन्दोलन और काव्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–02
- अग्रवाल, पुरुषोत्तम – अकथ कहानी प्रेम की, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
- दुबे, धनंजय – मध्यकाल एक पुनमूल्यांकन, श्री नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली
- अनामिका – स्त्रीत्व का मानचित्र, सारांश प्रकाशन प्रा. लि., दिल्ली
- अमरनाथ – नारी का मुक्ति संघर्ष, रेमाधव पब्लिकेशंस, दिल्ली, संस्करण 2007

- प्रदीप पंत – स्त्री और समाज, नवदीप प्रकाशन, रोहिणी, दिल्ली, संस्करण 2009
- चतुर्वेदी नंद (सं.) – मीराँ संचयन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली–02, संस्करण 2016
- शेखावत कल्याणसिंह – मीरां ग्रंथावली, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली–02, प्रथम संस्करण 2011
- त्रिपाठी विश्वनाथ – लोकवादी तुलसीदास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली
- नीरू अग्रवाल (सं.) – भूमण्डलीकरण और हिन्दी उपन्यास, अनन्य प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2015
- अनामिका – मन माँझने की जरूरत, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली 2006
- अनामिका – मौसम बदलने की आहट, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली 2012

Dr. D. M. Rathod
Associate Professor, Hindi Department, Smt. B. V. Dhanak Arts, Commerce, Science and Management College , Bagasara (Dist. Amreli).